OUKA
The University of Osaka
Institutional Knowledge Archive

Title	The Influence of Ramayana and Mahabharata on the Mind and Life of Indian People
Author(s)	Chaudhary, Harjender
Citation	大阪大学世界言語研究センター論集. 2011, 6, p. 113-121
Version Type	VoR
URL	https://hdl.handle.net/11094/3540
rights	
Note	

The University of Osaka Institutional Knowledge Archive : OUKA

https://ir.library.osaka-u.ac.jp/

The University of Osaka

The Influence of *Ramayana* and *Mahabharata* on the Mind and Life of Indian People

CHAUDHARY Harjender *
हरजेन्द्र चौधरी

Abstract :

The two Indian Epics---the Ramayana and the Mahabharata---have deeply influenced Indian way of thinking and living. This multi-dimensional influence may be traced through centuries. This influence is a glaring example of the transcendence of time as well as space. From ancient times to the present age, the two epics have been a source of artistic and literary creation --- sculpture to painting and music to dances of India. Even the contemporary Indian literature of various Indian languages as well as electronic media owes a lot to these two epics.

This brief article takes note of various dimensions of the influence of the Ramayana and the Mahabharata on Indian mind and behavior.

Keywords : Ramayana, Mahabharata, Indian People's mind and life

＊　Research Institute for World Languages, Osaka University, Specially Appointed Associate Professor

भारतीय मन और जीवन पर रामायण-महाभारत का प्रभाव

किसी अच्छी रचना अथवा कलाकृति से गुज़रने के बाद पाठक/ दर्शक/ श्रोता/ भोक्ता/ रसिक वही नहीं रह जाता जो वह उस रचना अथवा कलाकृति का आस्वादन करने से पहले होता है। आस्वादित रचना उसे किसी न किसी सीमा तक अवश्य प्रभावित करती है, उसके भीतर किसी परिवर्तन के बीज डालती है और उसकी संवेदना व स्मृति के भीतर हस्तक्षेप करती है। उसके पूर्वानुभवों को और पुख़्ता करती है या उनका प्रतिकारक (ऐंटीडॉट) प्रस्तुत करती है। साहित्यिक रचनाओं के सन्दर्भ में यह बात अन्य कला-रचनाओं की तुलना में संभवतः अधिक सच है।

साहित्य प्रभावित करता है, अपना प्रभाव पाठक/श्रोता पर छोड़ता है, यह बात हम सब जानते-मानते हैं। प्रभाव की श्रेणियों और स्तरों में पर्याप्त विविधता हो सकती है। जो रचना हम पाठकों/ श्रोताओं की संवेदना को सहलाकर उसके ऊपर से हवा-सी गुज़र जाए और स्मृति व व्यवहार में हस्तक्षेप न करे, वह 'सतही प्रभाव' वाली रचना कही जा सकती है। परंतु हमारी संवेदना को ऊपर से छूने-सहलाने के बदले उसका स्थायी हिस्सा बन जाए, स्मृतियों में रच-बस जाए, रक्त में घुलकर पीढ़ी-दर-पीढ़ी हमारी शिराओं में प्रवाहित होने लगे, शिक्षित-अशिक्षित जनसामान्य की सोच और आचरण में जाने-अनजाने जिसकी झलक मिलती हो, ऐसा प्रभावपूर्ण साहित्य कम ही होता है।

भारतवर्ष के सन्दर्भ में जब ऐसी व्यापक प्रभाव वाली साहित्यिक रचनाओं के बारे में सोचते हैं तो पुराणों, उपनिषदों, जातक कथाओं और भारत के दो महाकाव्यों ---रामायण व महाभारत--- पर सहज ही हमारी दृष्टि जाती है। वर्ण-व्यवस्था की उत्तरोतर बढ़ती जकड़न ने व्यापक जनसमुदाय को शिक्षा व साक्षरता से दूर व वंचित रखा, इसलिए स्वाभाविक रूप से भारत में लिखित-पठित साहित्य परम्परा पर मौखिक-वाचिक परम्परा हावी रही। प्राचीन रचनाओं के स्थिर-अंतिम रूप शताब्दियों लंबी रचनात्मकता ने निर्मित किए। एक ही रचना अनेक रचनाकारों के संयुक्त ---समानांतर या असमानांतर, एकावधि या अनेकावधि व्याप्त----प्रयासों का प्रमाण-परिणाम बनी। यहाँ तक कि मूल रचना अपने प्रक्षिप्तांशों की तुलना में बहुत ही छोटी हो सकती थी। महाभारत इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण है।

दोनों महाकाव्यों ----रामायण व महाभारत ---की कहानी भारत के अनपढ़-निरक्षर लोग भी जानते हैं। ये बहुपठित रचनाएँ नहीं हैं, पर बहुज्ञात हैं। यह मौखिक–वाचिक साहित्य परम्परा का चमत्कार है। नानी-दादी की कहानियों और प्रतिवर्ष दशहरे से दस दिन पहले शुरू होनेवाली (दस दिन चलने वाली) रामलीलाओं की परम्परा से यह संभव होता है कि हम भारतीय लोग इन महाकाव्यों के कथा-सूत्रों से सहज ही परिचित हो जाते हैं। कहानियों और लीलाओं के प्रभावों के प्रति हम भारतीय लोग प्रायः सचेत नहीं रहते। हम इनके सन्दर्भ में बहुत विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण भी नहीं अपना पाते।

कथानक और अंतर्वस्तु की दृष्टि से ये दोनों महाकाव्य परस्पर काफी भिन्नता लिए हुए हैं। रामायण एक आदर्शवादी रचना है, जिसमें अच्छे-बुरे के बीच में तीखा विभाजन दिखाया गया है। यहाँ पक्षधरता बहुत स्पष्ट है। पाप और पुण्य, नैतिक और अनैतिक, नायक और खलनायक के बीच का तीखा विभाजन इस रचना को आदर्शवादी रूप देने वाला प्रमुख कारण है। पर आधुनिक दृष्टि से विश्लेषित करें तो हम पाएँगे कि विचलन यहाँ भी मौजूद हैं। नायक में कुछ कमियाँ और खलनायक-पक्ष में कुछ खूबियाँ खोजी व रेखांकित की जा सकती हैं। दूसरी ओर, महाभारत में 'मनुष्य' के मूल स्वभाव पर टिप्पणियाँ करने वाले प्रसंगों और घटना-क्रम की भरमार है। महाभारत के युद्ध में विजय प्राप्त करने वाले पांडव-पक्ष की कमियाँ भी यहाँ बार-बार इस तरह उजागर होती हैं कि उनकी ओर श्रोताओं-दर्शकों-पाठकों का ध्यान जाता है। रामायण के मुकाबले में महाभारत अधिक यथार्थवादी रचना ठहरती है। महाभारत में अनेक ऐसे प्रसंग मिलेंगे, जिनकी समकालीन संदर्भों में सरलता से व्याख्या-पुनर्व्याख्या की जा सकती है।

महाभारत के बारे में प्रसिद्ध है कि जो-कुछ इस विश्व में मौजूद है, वह सब महाभारत में है, और जो महाभारत में वर्णित नहीं है, वह इस विश्व में भी कहीं नहीं है। इस वक्तव्य के अतिशयोक्तिपूर्ण होने के बावजूद कम से कम इतना तो कहा ही जा सकता है कि महाभारत में मनःस्थितियों, मनोवृत्तियों, जीवन-स्थितियों, घटनाओं और पात्रों की व्यापक विविधता मिलती है, 'शाश्वत' और 'समकालीन' दोनों की उपस्थिति खोजी जा सकती है।

एक उदाहरण से उपर्युक्त बात को स्पष्ट किया जा सकता है। महाभारत में वर्णित 'ब्रह्मास्त्र' का प्रयोग और हिरोशिमा-नागासाकि की परमाणु त्रासदी एक जैसी 'घटनाएँ' लगती हैं। दोनों घटनाओं के बाद की गई चेतावनी-पूर्ण भविष्यवाणियों में अद्‌भुत समानता दृष्टिगोचर होती है। इस पृथ्वी पर लंबे समय तक वनस्पति नहीं उगेगी और शिशु विकलांग व अर्धविकसित (पैदा) होंगे। धर्मवीर भारती ने अपने काव्य-नाटक *अंधायुग* में इस प्रसंग को पूरी तीव्रता से उभारा है।

मैं हूँ व्यास।
ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्रह्मास्त्र का।
यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ ओ नरपशु!
तो आगे आने वाली सदियों तक
पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी
शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुष्ठग्रस्त
सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी

जो कुछ भी ज्ञान संचित किया है मनुष्य ने
सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में

सदा-सदा के लिये होगा विलीन वह
गेहूँ की बालों में सर्प फुफकारेंगे
नदियों में बह-बह कर आयेगी पिघली आग।
[भारती 1971:92-93]

सौभाग्य की बात है कि यह डरावनी भविष्यवाणी पूरी तरह सच साबित नहीं हुई। हिरोशिमा आज किसी भी अन्य जापानी शहर जैसा साफ-सुथरा शहर है और परमाणु-गुंबद के आसपास के मैदानों में हरियाली लहरा रही है।

हस्तिनापुर में बैठा संजय अपनी दिव्य दृष्टि से 'कुरुक्षेत्र' में लड़े जा रहे युद्ध को देख रहा है और राजा धृतराष्ट्र को बता-दिखा रहा है, इस प्रसंग को कुछ उत्साही लोग उस समय टेलीविजन जैसी किसी तकनीक के विकसित होने के तथ्य के रूप में स्थापित करने को लालायित रहते हैं। पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि महाभारत के रचनाकार/ रचनाकारों की कल्पना-शक्ति और वर्णन-शक्ति अद्‌भुत थी। उसका जादुई प्रभाव हम आज भी अनुभव कर सकते हैं।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ रामविलास शर्मा का कहना है कि अगर इन पुरानी रचनाओं पर आधारित भारतीय साहित्य को साहित्य की श्रेणी से अलग कर दिया जाए तो भारतीय साहित्य का अस्सी प्रतिशत भाग बाहर हो जाएगा। उनका मानना यही है कि भारत के अस्सी प्रतिशत साहित्य का इन पुरानी रचनाओं से प्रत्यक्ष या परोक्ष सम्बंध है। उनकी यह मान्यता अनुमान –आधारित है। इसकी सत्यता को परखना भी सरल नहीं है। पर उनके इस वक्तव्य से इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि रामायण व महाभारत नामक दोनों महाकाव्य अनेक शताब्दियों तक रचनात्मक प्रेरणाओं और कथानकों के चुनावों के प्रमुख आधार-स्रोत रहे हैं।

संस्कृत साहित्य के स्वर्ण-काल के दौरान रचनाकारों ने इन महाकाव्यों से अपने कथानकों का चुनाव किया। कालिदास का रघुवंशम् महाकाव्य रामायण के नायक राम के कुल का बखान करनेवाला काव्य है तो उनका विश्वप्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुंतलम् महाभारत की एक अवांतर कथा पर आधारित है। ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं।

मध्यकालीन भक्ति-साहित्य पर भी इन महाकाव्यों का प्रभाव देखा जा सकता है। हिन्दी भक्ति साहित्य की चार काव्य-धाराओं में से दो विष्णु के दो अवतारों ---राम और कृष्ण --- पर आधारित काव्यधाराओं का सम्बंध क्रमशः रामायण और महाभारत से है। तुलसीदास का महाकाव्य *रामचरितमानस* (जो हिन्दी रामायण के नाम से लोक-प्रसिद्ध है) उत्तर भारत के ---विशेषरूप से उत्तर प्रदेश व बिहार के ---अधिकतर धार्मिक गृहस्थों की जीवन-चर्चा का महत्त्वपूर्ण अंश है। रामलीलाओं के आयोजनों के दैरान रामचरित मानस की चौपाइयों की गूँज पूरे वातावरण में भरी रहती है। अन्य भारतीय भाषाओं में रचित रामायण-ग्रंथों का व्यापक पठन-पाठन उन भाषा-भाषियों

द्वारा किया जाता है।

> विशाल भारत भूमि के सभी प्रदेशों और अंचलों में रामायण की कथावस्तु पर आधृत रामकाव्यों की रचना हुई है। रामायण उपजीव्य और प्रेरक-ग्रंथ रहा है। उसके प्रतिपाद्य को आधार बनाकर असंख्य कवियों ने रामायण-सदृश काव्य-ग्रंथों का प्रणयन कर अपने कृतित्व की सार्थकता का अनुभव किया है।
> ……………द्रविड़ भाषाओं में रामकाव्य की लोकप्रियता और रामायण के अनुसरण की परिपाटी आज भी विद्यमान है। आधुनिक युग में भी रामायण की कथावस्तु का आधुनिक जीवन-मूल्यों के संदर्भ में पुनराख्यान हो रहा है और कन्नड तथा तेलुगु में नवीन रामायणों की रचना हुई है। राष्ट्रभाषा हिन्दी में रामायण का सर्वश्रेष्ठ रूप रामचरितमानस उपलब्ध है। ख़ड़ीबोली में भी एक दर्जन से अधिक काव्य रामकथा को उपजीव्य बनाकर लिखे गए हैं। संक्षेप में भारतीय जनमानस के सब से अधिक समीप यदि कोई काव्य सतत रहा है, तो यह रामायण है और आज भी किसी न किसी न रूप में इस देश की जनता से वह जुड़ा हुआ है।……..रामचरितमानस के सदृश्य ही भारत की अन्य भाषाओं में रामकथा पर आधृत काव्य लिखे गये। [त्रिपाठी,1972:9-10]

अनेक बोलियों में भी लिखित-अलिखित रामायण की परम्परा विद्यमान है, देहात के रामलीला-आयोजनों के समय इसके अनेक प्रमाण प्राप्त किए जा सकते हैं।

भारतीय भाषाओं के अनेक आधुनिक लेखकों ने अपनी रचनाओं के आधार-स्रोत के रूप में रामायण व महाभारत के कथानकों व प्रसंगों का सदुपयोग किया है तथा आधुनिक संवेदना की अभिव्यक्ति के उद्देश्य से प्राचीन व मिथकीय घटनाओं-प्रसंगों की पुनर्व्याख्या की है। साहित्य की विभिन्न विधाओं --- कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि---- की रचना मिथकीय प्रसंगों और उनकी पुनर्व्याख्या को केन्द्र में रखकर की गई है। धर्मवीर भारती के काव्य-नाटक *अंधायुग* की चर्चा ऊपर की जा चुकी है। श्री नरेश मेहता की *महाप्रस्थान*, *संशय की एक रात* जैसी काव्य-रचनाएँ भी इसी श्रेणी में आती हैं। इनके आधार-स्रोत क्रमशः महाभारत व रामायण से लिए गए प्रसंग ही हैं।

साहित्य के अलावा रामायण और महाभारत का प्रभाव मन व जीवन के अनेक अन्य क्षेत्रों में भी दिखाई पड़ता है। इन दोनों महाकाव्यों के अनेक पात्र भारतीय मन में आद्य-बिम्बों के रूप में आज भी विद्यमान हैं। ये विविध मानव-चरित्रों का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र हैं। ठेठ देसी लोक-जीवन से उदाहरण देना चाहें तो पुत्र-मोह से ग्रस्त किसी भी मंत्री को धृतराष्ट्र, पतिव्रता स्त्री को सीता और सावित्री, भ्रातृ-भक्त को लक्ष्मण व भरत, परस्त्री की चाह रखने वाले किसी सत्तावान को रावण, पितृ-भक्त को श्रवणकुमार कह देना भारतीयों के लिए सामान्य घटनाएँ हैं। इन आद्य-बिम्बों के संबन्ध

में अलग से पूछने-जानने की आवश्यकता किसी अनपढ़-निरक्षर, धुर देहाती व्यक्ति को भी नहीं होती। यह इन महाकाव्यों के प्रभावों का संभवतः सर्वाधिक सशक्त प्रमाण है।

आद्य-बिम्बों के रूप में भारतीय मन में बसे इन पात्रों के अलावा चिंतन और मान्यताओं के स्तर भी पर दोनों महाकाव्यों का प्रभाव देखा जा सकता है। कर्मफल तथा पुनर्जन्म के सिद्धांत में जन-सामान्य की आस्था सहस्रों वर्षों से चली आ रही है। इस जन्म के सुख-दुःख की पृष्ठभूमि पिछले जन्म के कर्मों तथा अगले जन्म के सुख-दुःख के कारण के रूप में वर्तमान जन्म के कर्मों को देखना सामान्य बात है। यहाँ तक कि निर्वाण और मोक्ष की संभावना भी कर्मों के बल पर ही साकार होती है। बौद्ध धर्म की जातक कथाओं के वैचारिक आधार-स्रोत के रूप में कर्मफल व पुनर्जन्म के सिद्धांत में गहरी आस्था विद्यमान है। महाभारत में कर्मफल व पुनर्जन्म सिद्धांत ठोस कथानकों के रूप में परिणत हुए हैं, इसलिए वे सरलता से व्यापक जन-स्मृति व लोक-आस्था का हिस्सा बन गए। अर्जुन के मन में उत्पन्न वैराग्य-भाव के प्रतिकारक के रूप में प्रस्तुत गीता-संदेश से पहले कृष्ण भगवान अपने विराट् रूप के साथ-साथ अर्जुन को स्वर्ग के भी दर्शन करवाते हैं कि जो युद्ध में मारे जा चुके हैं, उनकी आत्माएँ अक्षुण्ण-अमर हैं। अगले जन्म में पुनर्मिलन की संभावना निर्मित करने वाला यह घटना-क्रम रुचिकर कथा और गहरी मान्यता के रूप में भारतीय लोक-स्मृति का स्वाभाविक अंश है। कथाओं और घटना-क्रम में अनुस्यूत दार्शनिक मान्यताएँ यहाँ उच्च बैद्धिकता की माँग नहीं करतीं, इसलिए एक सामान्य भारतीय अपने बचपन से ही इन दार्शनिक मान्यताओं को पचाना शुरू कर देता है। फलस्वरूप, ये भारतीयों के रक्त में, उनके संस्कारों में घुल-मिल जाती हैं।

कर्मफल व पुनर्जन्म सिद्धान्त से सम्बंधित अनेक अनुष्ठानों का आयोजन भी सामान्य तौर पर देखा जा सकता है। अनेक रूढ़ियाँ और अंधविश्वास भी इससे जन्मे हैं। महाभारत में मृत प्रियजनों के श्राद्ध –कर्म का कथात्मक प्रसंग आता है। भारतीय कैलेण्डर के सातवें माह – आश्विन—का कृष्ण-पक्ष आज भी श्राद्ध-पक्ष के रूप में मनाया जाता है। पितर-स्मृति के इस आयोजन में पक्षियों-प्राणियों को यह मानकर भोजन प्रदान किया जाता है कि अंततः भोजन हमारे मृत पूर्वजों –पितरों—की भूख-प्यास को संतुष्ट करेगा। पिंड-दान जैसे अनुष्ठान भारत की पवित्र मानी जाने वाली जलराशियों --- नदियों व सरोवरों ---के प्रदूषण का कारण बनते हैं, यह बात जानते हुए भी लोग कर्मकाण्ड करते रहते हैं। रामायण-महाभारत से आने वाली ऐसी और भी अनेक 'परम्पराओं' को देखा जा सकता है, जो रूढ़ियों में परिवर्तित हो चुकी हैं।

दिए गए 'वचन' का पालन करना, सत्य बोलना, घर आए अतिथि का स्वागत-सत्कार करना, अपने से बड़ी आयुवालों का सम्मान करना आदि कुछ आदर्श हैं जो इन महाकाव्यों के कथा-प्रसंगों से जुड़ते दिखाई पड़ते हैं। " रघुकुल रीति सदा चली आई प्राण जाहिँ पर वचन न जाई " [सिंह 1999: 365] जैसे आदर्शों की मान्यता आज भी है। यह अलग बात है कि ऐसे आदर्श आज व्यवहार में कम ही परिणत होते दिखते हैं। बुज़ुर्गों का सम्मान करना भी आज व्यावहारिक आदर्श नहीं रहा। पीढ़ियों के बीच का द्वन्द्व

और बढ़ती 'वृद्धायु-समस्या' आज के भारत की ज़्यादा बड़ी सच्चाइयाँ हैं। 'अतिथि देवो भवः' वाला आदर्श भी आंशिक रूप से ही व्यवहार में उतर पाता है। वह भी शहरों में कम और देहात में कुछ अधिक अंश में। सत्य बोलने के आदर्श को तो युधिष्ठिर के 'अर्धसत्य' ('अश्वत्थामा हतो हतः')ने सदियों पहले कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में क्षत-विक्षत कर दिया था। जो भी हो, उपर्युक्त आदर्श आज भी भारतीय नैतिकता के अंश हैं। यह अलग बात है कि ये आंशिक रूप से ही भारतीय आचरण का हिस्सा बन पाते हैं।

आदर्शों और अवधारणाओं के साथ-साथ कभी-कभी शब्दावली भी उन्हीं प्राचीन स्रोतों से आती है। दो सुप्रसिद्ध उदाहरण देखें जिनमें प्राचीन शब्दावली व अवधारणा को आधुनिकता के आलोक में पुनरावेषित व पुनर्व्याख्यायित किया गया है। एक आकाशवाणी और दूसरा राम-राज्य । महाभारत के यक्ष-प्रश्न-प्रसंग में प्रयुक्त शब्द 'आकाशवाणी' आज 'रेडियो' (भारतीय रेडियो) के लिए रूढ़ हो चला है। राम-राज्य शब्द-युगल का प्रयोग बीसवीं सदी में गाँधी जी ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान आदर्श प्रशासनिक व्यवस्था के अर्थ में किया और इसे आधुनिक जनतंत्र की लोकहितकारी अवधारणा से जोड़ दिया। यह अलग बात है कि आजकल 'रामराज' का अर्थ 'लूट-खसोट को संभव बनाने वाली नाकारा शासन-व्यवस्था' भी है। लोक-हितैषी होने का नाटकीय दावा करने वाली व्यवस्थाएँ जन-आक्रोश को प्रायः व्यंग्य की ओर धकेल देती हैं।

भारत के चार प्रमुख हिन्दू-पर्वों की परम्परा रामायण व महाभारत से आती है। दशहरा, दीवाली और रामनवमी का सम्बंध रामायण से है तो कृष्ण –जन्माष्टमी का सम्बंध महाभारत से। विष्णु के इन दो अवतारों---राम और कृष्ण --- के जन्म-दिवस धार्मिक प्रवृत्ति वाले हिन्दुओं के लिए महत्त्वपूर्ण त्योहार हैं, जबकि दशहरा और दीवाली जैसे पर्व सभी हिंदुओं व अनेक अन्य धर्मावलंबियों द्वारा भी मनाए जाते हैं। दशहरे पर रावण-मेघनाद कुंभकर्ण के पुतलों का दहन होता है, आतिशबाज़ी होती है। इससे पहले नौ दस दिन तक रामलीला का मंचन व सात –आठ दिन तक नवरात्र-समारोह व दुर्गा-पूजा होने के कारण दशहरा (विजय-दशमी) पर्व बहुत नाटकीय त्योहार है। बुराई और असत्य पर अच्छाई और सत्य की विजय के अवसर के रूप में मनाया जाने वाला यह त्योहार उत्तर भारत में पकती फसलों और सुधरते मौसम के कारण बहुत धूमधाम से मनाया जाता है। रामायण के कथा-प्रसंगों और वर्तमान जीवन-स्थितियों और आयोजनों से जन-जीवन में उल्लास का संचार करने वाले इस पर्व के बीस दिन बाद (भारतीय कैलेण्डर के आठवें महीने ---कार्तिक--- की अमावस्या को) दीपावली-पर्व मनाया जाता है। भगवान राम की अयोध्या-वापसी के अवसर पर अयोध्या-वासियों द्वारा घी के दीपक जलाकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने की घटना की स्मृति में मनाया जाने वाला यह त्योहार मिठाइयों-फलों-मेवों और उपहारों के आदान-प्रदान और व्यावहारिक रूप से उपयोगी सम्बंधों को बनाने-निभाने वाले कर्मकाण्डों से लबालब होता है। घी के दीपकों का स्थान अब मोमबत्तियों, तेल के दीपकों और देश-विदेश में बनी बिजली की, तरह-तरह की, सजावटी बत्तियों ने ले लिया है।

आतिशबाज़ियों से ध्वनि व वायु-प्रदूषण का स्तर खतरनाक सीमाओं के पार चला जाता है। ऐसे में अनेक आयोजनों-अनुष्ठानों-कर्मकाण्डों की पृष्ठभूमि में निहित कथा-प्रसंग लगभग भुला दिए जाने के बावजूद यह तथ्य अपनी जगह कायम है कि उपर्युक्त पर्वों का सम्बंध रामायण व महाभारत से ही है।

भारतीयों के नामों के स्रोतों के रूप में इन दोनों महाकाव्यों की चर्चा दिलचस्प व प्रासंगिक है। राम, कृष्ण, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, बलराम , बलवीर, बजरंग , हनुमान, दशरथ, मोहन, गोपाल, सीता, सावित्री, राधा, कौशल्या, सुमित्रा, शकुंतला, भीम, अर्जुन, सहदेव, भीष्म, युधिष्ठिर आदि नाम कहीं स्वतंत्र अस्तित्व रखते हैं तो कहीं पूरे, अनेकांशीय नाम का एक अंश होते हैं। राम, रामकृष्ण, रामलखन, भरतराम, श्रीराम, गोपालराम, रामगोपाल, सीता देवी, सीता कुमारी, भीमसिंह, अर्जुन सिंह, हनुमान सिंह आदि-आदि अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। इन नामों के साथ प्रायः उपनाम, गोत्र-नाम या जातिसूचक नाम भी जोड़ लिए जाते हैं। पर इन उदाहरणों से पता चलता है कि अनेक भारतीयों के मूल नाम रामायण-महाभारत के पात्रों के नामों के आधार पर रखे जाते हैं। आजकल छोटे नाम रखने का फैशन ज़ोरों पर है, सिंह, कुमार आदि मध्य-नामों का प्रयोग कम होने लगा है, इसके बावजूद इन मूल नामों का प्रचलन जारी है। भरत, कर्ण, दुश्यंत जैसे नाम खूब चल रहे हैं। संस्कृत के छोटे, सुध्वन्यात्मक शब्दों को नामों के रूप में अपनाने का फैशन भी समांतर रूप से चल रहा है।

रामायण और महाभारत दोनों महाकाव्य धर्म-पालन (कर्तव्यनिष्ठ होने) की बात करते हैं। यह धर्म-पालन का महासंदेश इन महाकाव्यों के कथा-प्रसंगों पर केन्द्रित टेलीविज़न-धारावाहिकों में भी मौजूद रहता है। यह अलग बात है कि पिछले लगभग ढाई दशकों की अवधि के दौरान धर्म-पालन वाले धारावाहिक निर्माताओं-निर्देशकों ने खूब 'धन-अर्जन', 'यश-अर्जन' किया है। भारतीय मिथक अनेक धारावाहिकों के आधार-स्रोत के रूप में प्रयुक्त किए गए हैं। रामायण व महाभारत नामक सीरियलों के प्रारंभिक प्रदर्शनों के दौर में प्रसारण के समय सड़कें-गलियाँ सूनी हो जाया करती थीं। सड़कें-गलियाँ जितनी खाली होती जातीं, दूरदर्शन धारावाहिकों के निर्माण से जुड़े अनेक दावेदारों की जेबें उतनी ही भरती जाती थीं। यही कारण था कि रामायण व महाभारत धारावाहिकों के बाद 'जय वीर हनुमान' जैसे अनेक ऐसे सीरियल और 'माई फ्रेंड गणेशा' जैसी ऐसी अनेक फिल्में बनीं, जिनके केन्द्र में कोई देवता या कोई मिथकीय प्रसंग या नायक रहता था। अनेक धारावाहिकों के मूल स्रोत के रूप में रामायण या महाभारत के रोचक प्रसंगों का दोहन किया गया। कहने का तात्पर्य यह है कि भारत में एलेक्ट्रोनिक मीडिया और रामायण-महाभारत महाकाव्यों की पारस्परिकता के अनेक धार्मिक-आर्थिक आयाम दिखाई पड़ते हैं। टेलीविज़न के साथ-साथ कंप्यूटर-इंटरनेट पर भी न्यूनाधिक रूप में यह बात लागू होती है।

महाभारत में वर्णित प्रसंग (संजय द्वारा दिव्य दृष्टि से कुरुक्षेत्र के मैदान में घटित हो रहे घटनाक्रम को देखकर धृतराष्ट्र के समक्ष उसका विवरण प्रस्तुत करना) टेलीविज़न जैसी किसी आधुनिक तकनीक के होने का प्रमाण हो या न हो, यह निश्चित है कि टेलीविज़न और फिल्म उद्योग रामायण व महाभारत

के कथा-प्रसंगों का दोहन करके खूब फला-फूला है और अब भी फल-फूल रहा है।

संदर्भ सूची:

भारती, धर्मवीर, 1971, “अंधायुग”, किताब महल, इलाहाबाद.

सिंह, योगेन्द्र, 1999, “श्री रामचरितमानस की लोकभारती टीका प्रामाणिक पाठ सहित”, लोकभारती प्रकाशन,इलाहाबाद.

स्नातक, विजयेन्द्र, 1972, भूमिका, त्रिपाठी रमानाथ, “रामचरितमानस और पूर्वांचलीय रामकाव्य”, आदर्श साहित्य प्रकाशन, दिल्ली.

（2011.06.29　受理）